International Journal of Applied Research 2018; 4(9): 36-38

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2018; 4(9): 36-38
www.allresearchjournal.com
Received: 21-07-2018
Accepted: 25-08-2018

डॉ इन्द्रनारायण झा
व्याख्याता, राजकीय शास्त्री संस्कृत महाविद्यालय, चेचट, कोटा, राजस्थान, भारत

Correspondence
डॉ इन्द्रनारायण झा
व्याख्याता, राजकीय शास्त्री संस्कृत महाविद्यालय, चेचट, कोटा, राजस्थान, भारत

आधुनिक जीवन की समस्याओं का एक मात्र समाधान गीता का कर्मयोग

डॉ इन्द्रनारायण झा

सार
हमारा आधुनिक जीवन भौतिक सुख सुविधाओं से परिपूर्ण तथा बाहरी विकास पर ही केन्द्रित हो गया है। आन्तरिक विकास को उपेक्षित कर मानव जीवन का सन्तुलन तो बिगड़ा ही है। साथ ही विलासिता की भोग सामग्रियों से घिरा मानव भीतर ही भीतर एकांकी, अपूर्ण व रिक्त सा अनुभव करता है। जीवन के वास्तविक आनन्द की प्राप्ति में गीता की अहम भूमिका है जो भोग में नहीं अपितु कर्म में ही जीवन का आनन्द लेने का सन्देश प्रदान करती है। लगभग सभी विकसित देशों में यह स्थिति समान रूप से समस्या बनकर वहॉ के नागरिकों के समक्ष खड़ी है। अनिद्रा, बेचैनी, अवसाद, तनाव ने मानव के अस्तित्व पर ही प्रश्नचिह्न लगा दिये हैं। परन्तु गीता आज मानव की इन असीमित समस्याओं का एकमात्र समाधान व दृढ़ आधार के रूप में प्रस्तुत है। गीता भोग में अनासक्ति व योग को ही जीवन जीने की शैली के रूप में प्रेरित करती है।

कुंजी शब्द समत्व, अनासक्ति, योग, कर्मयोग, सिद्धि, निष्काम कर्म, भोग–स्पृहा, निःस्पृह, कर्मवाद, सतोगुण, तमोगुण

प्रस्तावना
गीता के अनुसार योग क्या है ?
गीता मे योग समता के रूप में परिभाषित किया गया है।

योगस्थः कुरू कर्माणि सङ्गं व्यक्त्वा धनञ्जय
सिद्धयसिद्धयोः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते। (2/48)

अर्थात् सिद्धि : असिद्धि में समता रहे, यही योग है। समता में जीवन की सार्थकता है, पूर्णता है। हे धनंजय! तू आसक्ति को त्याग कर सिद्धि असिद्धि में सम होकर योग में स्थित होकर कर्म कर क्योंकि समता ही योग कहीं जाती है।

बुद्धि युक्तो जहातीह उभे सुकृत दुष्कृते।
तस्मादोगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम् ।। (2/50)
परन्तु शास्त्र उक्ति है – कर्मणा बध्यते जन्तु :
कर्म से मनुष्य बंधता है।

परन्तु ना तो शास्त्रोक्त तथ्य असत्य हो सकते है ना ही स्वयं श्रीहरि के मुख से निःसृत गीता के वचन, ना ही दोनों विपरीतार्थक हो सकते है। विचार करने पर दोनों परस्पर पूरक ही प्रतीत होते है। समता से युक्त मनुष्य पाप–पुण्य से निर्लिप्त हो जाता है। अतः कर्मो में योग अथवा समत्व (समत्वं योगमुच्यते) ही कुशलता है।
चित्तवृत्तियों से निःस्पृह हो समत्व में स्थित रहना ही योग है।

यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः।
यस्मिनस्थितो न दुःखेन गुरूणापित विचाल्यते।। 22 ।।
तं विद्याद् दुःखसंयोग वियोगं योगसंजितम्।
स निश्चयेन योक्तव्यो योगौनिर्विण्णचेतसा।। 23 ।। (अ.6)

अर्थात्
जिसे प्राप्त कर अन्य किसी लाभ को उससे अधिक नही मानता है। जिसमें स्थित होकर बड़े भारी दुःख से भी चलायमान नहीं होता जो दुःखरूप संसार के संयोग से रहित है, वह योग धैर्य व उत्साहपूर्वक चित्त से निश्चय पूर्वक करना कर्तव्य है।
समता अर्थात् योग की प्राप्ति के लिये गीता में बुद्धि की स्थिरता की अनिवार्यता स्थापित की गई है। क्योंकि बुद्धि की स्थिरता से ही कर्तव्य कर्मो का समुचित प्रकार से पालन संभव है।

श्रुतिविप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्चला।
समाधावचला बुद्धिस्तदा योगमवाप्स्यसि ।। 53 ।। (अ.2)

अर्थात् भॉति : भॉति के वचनों को सुनने से विचलित हुई तेरी बुद्धि जब परमात्मा में अचल और स्थिर हो जायेगी तब तू योग को प्राप्ति हो जायेगा अर्थात् तेरा परमात्मा से नित्य संयोग हो जायेगा।

गीता में स्पष्टत : स्वयं के कल्याण अथवा ईश्वर प्राप्त हेतु ज्ञान व भक्तियोग के समान ही कर्मयोग को भी महत्वपूर्ण साधन बताया गया है।

न कर्मणामनारम्भान्नैष्कर्म्यं पुरूषौश्नुते।
न च सन्नयसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति।। 4 ।।
न ही कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणै : ।। 5 ।। (अ.3)

कर्मो को आरम्भ किये बिना न तो मनुष्य निष्कामता को प्राप्त होता है और न ही कर्मो के त्याग से सिद्धि को प्राप्त होता है। कोई भी मनुष्य क्षणमात्र भी बिना कर्म किये नहीं रहता क्योंकि सब प्रकृतिजनित गुणों द्वारा परवश होकर कार्य करने के लिये बद्ध है।

यस्तित्वन्द्रियाणि मनसा नियम्यारभतैर्जुन।
कर्मेन्द्रियैः कर्मयोगमसक्तः स विशिष्यते।।7।।(अ0 3)

हे अर्जुन! जो पुरूष मन से इन्द्रियों को वश में करके अनासक्त हो समस्त इन्द्रियों द्वारा कर्मयोग का आचरण करता है, वह श्रेष्ट है।
गीता में अनासक्ति पूर्वक कर्म पालन अर्थात् निष्काम कर्म को ही प्रधानता दी गई है। क्योंकि कामना, स्वार्थ व आसक्ति पूर्वक किये कर्मों में मन मात्र फलानुसंधान पर ही केन्द्रित हो जाता है जिससे चिन्ता, शोक, तनाव, काम, क्रोध, हिंसा, राग–द्वेष आदि विकारों से ग्रस्त हो मनुष्य पथभ्रष्ट व लक्ष्यभ्रष्ट हो जाता है।
समस्त कर्म सब प्रकार से प्रकृति के गुणों द्वारा किये जाते है, परन्तु अहंकार से मोहित अन्तःकरण वाला अज्ञानी मनुष्य स्वयं को कर्ता मान लेता है। मनुष्य प्रकृति के साथ अपना तादात्म्य मानता है और प्रकृतिजन्य गुणों द्वारा संपन्न क्रियाओं को स्वयं द्वारा संपन्न करना मानने लगता है । यहीं से जीवन में समस्याएं उत्पन्न होती है। सब कर्मों को परमात्मा को ही अर्पण कर, अनासक्त होकर जो मनुष्य कर्म करता है वह कमल के पत्ते की भांति पाप में लिप्त नहीं होता ।
कर्मयोगी ममत्व बुद्धि रहित होकर इन्द्रियों, मन, बुद्धि व काया से भी आसक्ति को त्यागकर अन्तः करण की शुद्धि के लिये कर्म करते है।
कर्मयोगी कर्मों के फल का त्याग करके भगवत्प्राप्ति रूप परम शांति को प्राप्त करता है। कर्मफल का आश्रय न लेकर करणीय कर्मो को करता है, वह संन्यासी व योगी है; सिर्फ क्रियाओं को त्याग देने वाला योगी नहीं है अर्थात् जीवन की सभी समस्याओं का एकमात्र समाधान है कि कर्मफल में अनासक्त रहते हुये समस्त कर्मो का सम्पादन किया जायें।

यज्ञार्थात् कर्मणोन्यत्र लोकौयं कर्मबन्धनः।
जो कर्म परमात्मा की प्रसन्नता के लिये लोकसंग्रह के लिये, सब लोगो के उद्धार के लिये, आसक्ति स्वार्थ एवं कामना को त्यागकर किया जाता है वह कर्म बन्धन नहीं है अपितु वह यज्ञ है।

''स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य''
अर्थात् अपने अपने लिये निर्दिष्ट कर्मो को कर उससे ही ईश्वर का पूजन कर।

श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः परधर्मात् स्वनुष्ठितात्।
स्वधर्म निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः।।

परधर्म में गुण बहुलता होने पर तथा उसका समुचित आचरण किये जाने पर भी तथा स्वधर्म का सम्यक् पालन ना कर पाने एवं उसका आचरण भी उचित प्रकार से ना करे जाने पर भी स्वधर्म अर्थात् स्वकर्म ही श्रेयस्कर है। स्वधर्म विगुण होने पर भी करणीय कर्म होने से श्रेष्ठ है। स्वधर्म पालन में मृत्यु भी हो जायें तो भी वह परमकल्याणकारी है। परधर्म में गुण बाहुल्यता पालन की सुगमता व उससे प्राप्य सुख की अधिकता होने पर भी परधर्म अत्यन्त भयानक परिणामदायी ही है।
इसी प्रकार गीता भौतिक विलासिता की विषय वस्तुओं के त्याग का निर्देश नही करती अपितु विषय वस्तुओं के भोग की लालसा व उनकी कामनाओं का परित्याग ही गीता का सौन्दर्य है। निःस्पृह रहकर विषय वस्तुओं को काम में ले तो उपयोग कहां जाता है परन्तु उनमें मन का रमना, रसास्वादन करना व उनमें लिप्त हो जाना विषय भोग है। वस्तुओं की प्राप्ति में हर्ष की अनुभूति न हो और उनके वियोग में दुख ना हो। सहजता व सरलता से उसका उपयोग मात्र ही श्रेयस्कर है।

गीतोक्त कर्मयोग व आधुनिक कर्मवाद में विभेद
गीता में व्यक्ति, जाति, राष्ट्र अथवा विश्व के लिये कर्म करने का निषेध नही है अपितु स्वधर्मपालन और स्वभूतहित चिन्तन ही गीतोक्त कर्मयोग का प्रतिपाद्य है। सांसारिक कर्तव्यों यथा जीविका, कुटुम्ब पालन, मानवाधिकार रक्षा, परोपकार व नैतिक कर्तव्यों के पालन के लिये गीता मनुष्य को प्रेरित ही करती है। परन्तु इहलौकिक विषय लाभ की भावना से भावित होकर किये गये कर्म, कर्म में प्रवृत्ति, लोभ, क्रोध, चित्त की चंचलता व भोग – स्पृहा जैसे विकार उत्पन्न करती है। आधुनिक कर्मवाद से तमोगुण की प्रधानता होती है। आधुनिक कर्मवाद भोगमुखी है जबकि गीतोक्त कर्मयोग भगवद्मुखी है अतः सतोगुण प्रधान है भोगमुखी कर्म राग–द्वेष, काम–क्रोध पाप – ताप द्वारा हमें ग्रसित करते है तथापि कर्मवादियों के मतानुसार कर्म में प्रवृत्त होने पर ही कर्म के लिये उत्साह बना रहेगा। पर वास्तविकता में गीतोक्त कर्मयोगी अनुकूलता प्रतिकूलता से परे रहते हुये कठोर एवं कठिन कर्मो के पालन में भी सात्विक उत्साह व उल्लास बनाये रखते है। गीता का कर्मयोग तो मनुष्य को सतोगुण से भी ऊर्ध्व गुणातीत स्थिति में ले जाता है क्योंकि गीता के अनुसार सत्वगुण भी मनुष्य को बॉधता है। गीता का वास्तविक आकर्षण गुणातीत अवस्था व अनासक्ति को प्राप्त कर वास्तविक आनन्द से परिपूर्ण रहकर कर्म करना ही है।

निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन।
निष्कर्ष
चित्त और बुद्धि से सब कर्मों को परमात्मा में अर्पण कर अनासक्ति पूर्वक कर्मों का संपादन करके ही समत्व अर्थात् योग में स्थित हुआ जा सकता है। आसक्ति रहित कर्मों के पालन से

इह लौकिक समस्त समस्याओं का समाधान संभव है। वस्तुतः तो अनासक्ति पूर्वक कर्मपालन अथवा निष्काम कर्म योग समस्याओं को उत्पन्न ही नहीं होने देते। इसी से परमात्म प्राप्ति भी सुगम हो जाती है। सकाम कर्म चूंकि जीव को बॉध देते है; अतः कामनाओं से निःस्पृह हो कर्म करने से ही मोक्ष भी अभीष्ट बन पड़ता है।

सन्दर्भ ग्रंथ

1. श्रीमद्भगवत्गीता हिन्दी अर्थ सहित – गीता प्रेस गोरखपुर
2. भगवच्चर्चा – गीता प्रेस गोरखपुर
3. साधक सुधा सिंधु स्वामी रामसुखदास जी – गीता प्रेस गोरखपुर
4. Bhagvad Gita As It Is – A.C. Bhaktivedanta Swami Prabhupada
5. श्रीमद्भगवद्गीता रहस्य (कर्मयोगशास्त्र) बाल गंगाधर तिलक।